© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 5 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099

वैदिक वाङ्मय में औषधीय वनस्पतियाँ : एक अध्ययन

साधना देवी
शोधच्छात्रा
इलाहाबाद विश्वविद्यालय
इलाहाबाद

वनस्पतियों से साम्य रखने वाली ऋचाओं का उल्लेख सर्वप्रथम ऋग्वेद में देखने को मिलता है। सभी वनस्पतियाँ फलती–फूलती नहीं और जो फूलती हैं, उन पर फल लगते ही हैं यह भी आवश्यक नहीं है। औषधीय गुणों वाली ऐसी समस्त वनस्पतियों से प्रार्थना की गई है कि वह उनके समुदाय को रोगों से मुक्त करें वैदिक चिंतकों की मान्यता के अनुसार सृष्टि के सभी तंत्र अपने–अपने अधिष्ठाता देवता से संबंधित रहते हैं और वनस्पतियों को उनके औषधीय गुण बृहस्पति देवता से प्राप्त होते रहते हैं।

मुंचन्तु मा शपथ्याइदथो वरुष्यादुत।

अथो यमस्य पड्वीशात् सर्वस्माद्देवकिल्विषात्।।[1]

ओषधियाँ मुझे शाप जनित रोगों से मुक्त करें, बल्कि वरुण देवता के शाप से भी दूर रखें, यम देवता की बेड़ियों से मुक्त रखें इतना ही नहीं समस्त दैव प्रदत्त पापों को मुझसे दूर रखें।

मनुष्य के दुःख तीन प्रकार के बताए गए हैंः–

1. **आधिदैविक** : दूसरे मनुष्यों अथवा संसार के अन्य प्राणियों के द्वारा जो भौतिक कष्ट भोगना पड़ता है उसे आधिदैविक दुःख की संज्ञा दी गई है।

2. **आधिभौतिक** : सामान्यतः कष्टों की अनुभूति इंद्रियों के माध्यम से की जाती है।

3. **आध्यात्मिक** : इनके अतिरिक्त कभी–कभी विशुद्ध मानसिक कष्ट भी भोगने पड़ते हैं। इन्हीं को आध्यात्मिक कहा जाता है।

दुःख वस्तुतः मन के विकारों के कारण पैदा होते हैं और उनका कोई स्पष्ट बाह्य उपाय कारण नहीं रहता। उक्त मंत्र में इन सभी प्रकार के कष्टों से मुक्ति की प्रार्थना की गई है। शाप जनित कष्ट उसे कहा

जाता है जो दूसरे के द्वारा कर्मणा अथवा वाचा के माध्यम से किसी को पहुंचाया जाता है दूसरे के अहित की भावना भी कदाचित कष्ट का कारण बन सकती है उसे मानसिक कहते हैं।

अवपतन्तीरवदन् दिव ओषधयस्परि

यं जीवमश्नवामहे न स रिष्याति पुरुष :।।[2]

द्युलोक से पृथ्वी पर आती हुई औषधियाँ बोलती हैं कि जिस जीव को हम व्याप्त या आच्दादित कर लें उस पुरुष का विनाश कभी नहीं होता प्राचीन मनीषी वनस्पतियों के औषधीय गुणों को स्वर्ग की देन मानते हैं। पृथ्वी पर होने वाले घटनाएं देवताओं के नियंत्रण में होती है। अतः औषधियां भी देवों कि प्राणियों पर अनुकम्पा से प्राणियों को प्राप्त होती है स्वर्ग से आती हुई औषधियां जो कहती हैं उनके अधिष्ठाता देवता का कथन माना जाता है–

मावो रिषत्खनिता यस्मै चाहं खनामि वः।

द्विपच्चतुष्पदस्मकं सर्वमस्त्वनातुरम्।।[3]

औषधि प्राप्ति के लिए भूमि का खनन कर्ता वनस्पतियों को हानि पहुंचाता ही है कदाचित् प्रार्थना के माध्यम से वह अपनी विवशता व्यक्त करता है शायद वह यह कहना चाहता है कि अवांछित तौर पर वनस्पतियों को नुकसान पहुंचाना उसका उद्देश्य नहीं है।

वनस्पतियों को अनावश्यक रुप से नष्ट नहीं करना चाहता। उसका समूल उच्छेदन नहीं करना चाहता। उत्खनन कर्ता के कार्य को हिंसा के तौर पर न देखा जाए। वह प्रार्थना करता है कि औषधियां उससे संबंधित सभी जनों अर्थात् द्विपाद और चतुष्पाद को रोग मुक्त करें। खनन कर्ता निकटस्थ और दूरस्थ वनस्पतियों से प्रार्थना करता है, जो देवताओं से भी तीन युग पूर्व उपस्थित थी तथा उनका भरण पोषण करने वाली औषधियों की संख्या सबसे अधिक बताई गई हैं। इस भूमंडल पर सर्वप्रथम ओषधियां उत्पन्न हुई थी जो जड़ी बूटियों के रूप में स्थित थी। तदनन्तर तीन युगों के पश्चात् मनुष्य एवं देवताओं की उत्पत्ति हुई। चारों वेदों में अश्विनौ देव की स्तुतियों एवं उनके द्वारा सम्पादित अनेक औषधि तथा शल्य के विख्यात कार्यो के उल्लेखों से युक्त हैं अश्विनौ जहां औषधियों द्वारा उपचार करते थे वहीं शल्य तथा प्रत्यारोपण कार्यों में भी उतने सिद्ध हस्त थे। केवल ऋग्वेद में अश्विनों देव से संबंधित मंत्रों की संख्या 634 है यह संख्या तीनों में प्राप्त शेष मंत्रों की संख्या से कहीं अधिक है। ऋग्वेद में औषधियों के तीन प्रकार बताए गए हैं।

1–दिव्य

2–पार्थिव

3–जलीय

त्रिर्नो अश्विना दिव्यानि भेषजा त्रिःपार्थिवानि त्रिरु दत्तमद्भ्यः[4]

शुभ कर्मों के पालन कर्ता अश्विन देव हमें द्युलोक, भूलोक और जलज ये तीन प्रकार की औषधियां तीन बार प्रदान करें। इससे दिव्य पार्थिव एवं जलीय इन तीन प्रकार की औषधियों का ज्ञान प्राप्त होता है। अनुसार ऋग्वेद में वर्णित 33 देवों में अग्नि, इंद्र, आदि देव की तरह अश्विनौ का वर्णन प्राप्त होता है जो एक युगल देव हैं।[5] इन्हें देवताओं के भैसज वैद्य के रूप में इनके गुणों का गांन किया गया है। अश्विनौ को देवताओं के भैषज न केवल वैदिक संहिताओं में प्राप्त होता है अपितु ब्राह्मणों एवं आरण्यको में भी स्वीकार किया गया है अश्विनौ देवताओं के वैद्य होने के साथ–साथ मनुष्यों की भी चिकित्सा की है इसका वर्णन इस प्रकार है। दिव्य भैषज युगल अश्विनौ के अनेक अद्भुत एवं रोमांचकारी कार्य वेदों में वर्णित है अश्विनीकुमारों ने कवि ऋज्राश्व, परावृज, कण्व, आदि ऋषियों को नेत्र ज्योति प्रदान की परावृज अंधा एवं पंगु था उसे पंगुत्व रोग से मुक्त कर के चलने योग्य बनाया। नारद ऋषि को श्रवण शक्ति प्रदान की।

कलि तथा च्यवन तरुण बनाया। शाहदेव्य और श्यव बंदन को दीर्घायु प्रदान की। दधीचि ऋषि को श्याव के शिर का एक भाग लगाया तथा पठर्वा का पेट ठीक किया और बीमना और बिश्वक की बुद्धि का उपचार किया और उन्हें बुद्धिमान बनाया, इन्द्र को मेष का वृषण लगाए, अश्विनी कुमारो ने अपने दिव्य उपचार से पृश्रिगु, पुरूकुत्स, दशव्रज अर्जुनेय दधीचि सिन्धु वशिष्ठ नर्य शयु विधन्त आदि पुरुषों को आयुर्वेदिक सहायता प्रदान कर चलने योग्य बनाया। दध्रिमति जो कि निःसंतान थी उसे पुत्रवती बनाया, विमद जो नपुंशक था उसे पत्नी योग्य बनाकर पत्नी प्रदान किया। इन सभी राशियों को भैषज उपचार से आरोग्य प्रदान किया। इस प्रकार दिव्य वैद्य अश्विनौ ने वैदिक युग में सैकड़ों व्यक्तियों का भैषज उपचार करके उन्हें रोगमुक्त स्वस्थ एवं जीवन यापन करने का अवसर प्रदान किया।[6] अश्विनौ को विभिन्न रोगों से संबंधित औषधियों का ज्ञान था तथा ऋग्वेद में औषधियों को सम्मान दिया जाता था ऋग्वेद में कहा गया है कि–

ओषधीरिति मातरस्तद वो देवीरूप बरूवे।[7]

अर्थात् औषधियों को माता देवी की संज्ञा से अभिहित किया गया है। ओषधियॉ मातृवत पालन करने वाली होती हैं अर्थात जिस प्रकार एक माता अपने पुत्र को समस्त दुखों से दूर करने का प्रयास करती है उसी प्रकार ओषधियॉ भी विभिन्न रोगों से दूर करती हैं। औषधियों को दिव्य शक्तियों को धारण करने के कारण उन्हें देवी की संज्ञा से संबोधित किया गया है। औषधियों में सोम को राजा कहा गया है क्योंकि सोम एक पेय ओषधि है जो मूञजवान पर्वत पर प्राप्त होता है तथा इन्द्र आदि देवों का प्रिय पेय है जिसे पीने के पश्चात

शक्ति प्रबल होने के साथ–साथ स्फूर्ति दायक हो जाती थी। समस्त औषधियां अपने राजा सोम से कहती हैं कि जिस रोगी के लिए ब्रह्म का ज्ञान धारण करने वाला भैषज हमारी योजना करता है उस रोगी को हम औषधियों के द्वारा रोग मुक्त कर दिया जाता है। यहां पर शाम का तात्पर्य चंद्रमा से ग्रहण कर सकते हैं क्योंकि समस्त औषधियां या वनस्पति चंद्रमा से रस तथा शक्ति ग्रहण कर के जीवित रहती हैं जिनसे मानव रोगों के उपचारार्थ प्रयोग की जाती है। मानव शरीर के विकास के साथ–साथ वातावरण एवं खान पान में परिवर्तन आने के साथ रोग उत्पन्न होने लगे कहा जाता है कि –*''आवश्यकता आविष्कार की जननी है''*। मनुष्य ने नए–नए रोगों के उपचारार्थ प्रकृति के अक्षुण्ण भंडार से नई–नई औषधियों एवं आविष्कार किया और रोगों से मुक्ति पाने का सतत प्रयास करता गया। इसी प्रयास का प्रथम दर्शन ऋग्वेद में प्राप्त होता है राजा अथवा क्षत्रिय सभा में उपस्थित होते हैं जहां औषधियां एकत्रित होती हैं उस विशेष ज्ञानवान् व्यक्ति को वैद्य कहते हैं। वह पैशाची शक्तियों का हनन करने वाला कहा जाता है। औषधियों के सन्दर्भ में ऋग्वेद के दशम मंडल में कहा गया है कि–

यत्रौषधी समग्मत राजानः समिताविव।

विप्रः सौच्यते भिषग रक्षोहामीवचातनः।।[8]

जिस देश में औषधीय ऐसे इकट्ठे होती हैं जैसे राजा लोग संग्राम में एकत्र होते हैं। इन ओषधियों संगमन स्थल पर वह ब्राह्मण वैद्य कहा जाता है। जो राक्षसों का विनाशक होता है अपने सामर्थ्य को देने वाली औषधियों का बल रूग्ण में अपने वीर्य को प्रकट करता है जैसे गाय गोष्ट से प्रकट होती हैं। उसी प्रकार रोग ग्रस्त पुरुष के शरीर में औषधियों का बल उत्पन्न होता है। समस्त औषधियॉ सर्वत्र व्याप्त हैं तथा रोगों पर आक्रमण करती हैं जिस प्रकार चोर मनुष्य धन समूह पर उत्तेजित होकर धावा बोलता है। ऐसा कर के औषधीय गुण शरीर में विद्यमान रोग रूपी पाप को नष्ट कर देते हैं। ऋग्वेद में औषधियों से रोग मुक्ति के लिए प्रार्थना की गई है। जो इस प्रकार है–

या फलिनीर्या अफला अपुस्पा याश्चपुष्पिणी

वृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्वंहसः।। [9]

अर्थात् हे औषधियों जो फल से युक्त हैं तथा जो फल से विहीन है जो पुष्प से रहित हैं तथा जो पुष्पवत हैं वह सभी औषधियां वृहस्पतिदेव के अनुाात होकर मनुष्यों को व्यक्ति रूप पाप से मुक्त करें।

भैषज्य के दृष्टिकोण से अथर्ववेद का अत्यधिक महत्व है। अतः इसे भैषज्य वेद भी कहा जाता है। अथर्ववेद में भैषज्य परक मंत्रों की संख्या लगभग 1081 है। स्वामी दयानंद सरस्वती का मत है हेमाद्रि तंत्रों को

अथर्ववेद का उपवेद माना है तंत्र विद्या भी अन्ततः मानव पीड़ा हरण के लिए होती है अतः भैषज्य विद्या मन्त्र तंत्र विद्या का समावेश हो जाता है अथर्ववेद भैषज्य शास्त्र का मूल आधार है। अथर्ववेद में औषधियों का वर्णन करते हुए कहा गया है कि–

तत ते कृणोमि भैषजमं सुभेषजमं।[10]

औषधियों के द्वारा विभिन्न रोगों की चिकित्सा होती है अतः इसे भेषज और सुभेषज (उत्तम चिकित्सा) कहा गया है। जिसके माध्यम से विभिन्न रोगों की चिकित्सा की जाती है

ओषधिनाम् रसेन................वियक्ष्मेण समायुषा। [11]

ओषधियां जीवन रक्षक होती है और चिकित्सा के प्रमुख साधन हैं औषधियों के रस से विभिन्न दवाईयॉ बनाई जाती हैं। रस आयु वर्धक होते हैं जिससे मानव को स्वास्थ्य प्रदान किया जा सकता है।

अवएत द्युलोक और भूलोक को औषधियों का पिता और माता बताया गया है। समुद्र जल वर्षा का कारण तथा समुद्र में नाना प्रकार की औषधियां जन्म लेती हैं जो मानव कल्याणार्थ के रूप में प्रयुक्त की जाती हैं।

या ओषधीः सोमराज्ञीर्बह्वीः। सोमरज्ञीर्वह्ववीः शतविचक्षणाः।

बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुंचन्त्वंहसः।। [12]

औषधियों को सोमरूपी राजा की रानियां बताया गया है अथवा सोम रूपी चंद्रमा से सामर्थ्य ग्रहण करने वाली सैंकड़ों कार्यों के संपादन में समर्थ एवं सैकड़ों रोगों के निवारण में वैद्य बृहस्पति द्वारा तैयार की गई अथवा वैद्य द्वारा निर्धारित औषधियां हमारी पीड़ा एवं पापं जन्य रोगों को हमसे छुड़ाए अथवा रोगों का परिहार करें।

अथर्ववेद के मंत्रों का आुयर्वेद से सम्बन्ध बताया गया है तथा अथर्व का अर्थ भेषज किया गया है। अथर्ववेद का नाम ब्रह्म वेद भी हैं। गोपथ ब्रााह्मण के अनुसार ब्रह्म शब्द ही भेषज वाचक है। अंगिरस का अर्थ भैषज्य से सम्बद्ध है। रस या रसायन विज्ञान को भी अंगिरस कहा है। अथर्ववेद के औषधि सूक्त में औषधि की परिभाषा एवं प्रकार का विस्तृत वर्णन प्राप्त होता है

या बभ्रवोयाश्च शुक्रा रोहिणीरूत पृश्नयः

असिक्नीः कृष्णा ओषधीः सर्वा अच्छावदामसि।।[13]

जो ओषधियॉ वीर्यवर्धक, क्षतों को भरने वाली, रस पोषण करने वाली श्याम रंग की, कृष्ण वर्ण की या विलेखन करने वाली ओषधियॉ है, उन सभी की हम प्रशंसा करते हें अथवा जो ओषधियॉ भूरे श्वेत–श्याम एवं कृष्ण वर्ण की है और जो चितकबरी फलियों वाली हैं एवं पुष्टिकर हैं उन औषधियों के सेवन का उपदेश करते हैं। शाकपूणि ने वनस्पतियों को अग्नि की संज्ञा दी है। वर्तमान समय में वनस्पति शब्द का सामान्य अर्थ वृक्ष रूप में ग्रहण किया जाता है। प्राचीन समय में वृक्ष विरूद्ध वनस्पतियों के मध्य अंतर स्थापित है। वृक्ष शब्द का अर्थ रूढ़ हो जाता है। सुश्रुत संहिता में इन्हीं औषधियों को दो भागों में विभक्त किया गया है–

1–स्थावर

2–जंगम

सुश्रुत संहिता में स्थावर ओषाधियों को चार भागों में विभक्त किया गया है–

1–वनस्पति– तासु अपुष्पायाश्चुपुष्पिणी फलवन्तों वनस्पतयः।

2–वृक्ष– पुष्प फलवन्तों वृक्षा।

3–विरूध– प्रतानवत्यस्तम्बिन्यश्च वीरूधः।

4–औषधि– फल पाकनिष्ठा इति ओषधयः।[14]

जंगम औषधियों को चार भागों में विभक्त किया गया है।

1–जरायूज 2–स्वेदज 3–अंडज 4–उद्भिज।[15]

चरक ने भी उपर्युक्त की तरह पादप जगत को चार भागों में विभक्त किया है। पादप् जगत् का विभाजन लगभग समान है चरक के द्वारा पादप जगत् का विभाजन इस प्रकार है–

1. वनस्पति– जिसमें फूल के बिना ही फलों की उत्पत्ति होती है। जैसे–गूलर, कटहल।
2. वानस्पत्य–जिसमें फूल के बाद फल लगते हैं। जैसे–आम अमरुद आदि।
3. औषधि– जो फल पकने के बाद स्वयं सूखकर गिर पड़ते हैं। उन्हें औषधि कहते हैं। जैसे–गेहूँ, चना, जौ इत्यादि।[16]

वैदिक मतानुसार औषधीया मानव जीवन से पूर्व भी विद्यमान थी। यह विश्व के प्राचीनतम ग्रंथ ऋग्वेद से भी प्राचीन हैं। ओषधिया रोगों से पूर्व ही विद्यमान थी ओषधि शब्द का अर्थ सायण ने अपने निरुक्त में इस प्रकार दिया है–

ओष;पाकःआसुधीयते इत्योषध्यह। –[17]

अर्थात्–जिनसे फल पकते हैं उन्हें ओषधि कहा जाता है औषधि ही औषधि कहलाती है। यास्क ने निरुक्ति करते हुए कहा है–

ओषधय ओषधयंतीति वा ओषत्येना धयन्तीति वा दोषद्यपतन्तीति वा।

अर्थात्–जो शरीर में शक्ति उत्पन्न करें, उसे धारण करती है या दोषों को दूर करती हैं वे ओषधियाँ या ओषधि होती है।

शतपथ ब्राह्मण में भी कहा गया हैं–

ओषम धयति तत ओषधयः संभवन। [18]

ओषधियां दोष नाशक होती हैं तो औषधियों में त्रिदोष नाशन की क्षमता होती है। ओषधियों में वातावरण के प्रदूषण को भी नष्ट करने की शक्ति रखती है।

ऐतरेय ब्राह्मण में कहा गया है–

प्राणो वै बनस्पति। [19]

यह वाक्य ऐतरेय ब्राम्ह्मण में तीन बार आया है जो एक महत्वपूर्ण दिशा की ओर संकेत करता है। वनस्पतियां प्राण हैं। कहने का तात्पर्य है कि वनस्पतियां हमारी प्राण हैं। वनस्पतियॉ हमारी प्राण प्रद शक्ति हैं। जिसे वर्तमान परिप्रेक्ष में ऑक्सीजन के नाम से जाना।

सन्दर्भ सूची

1. ऋ0 10/17/16
2. ऋ0 10/97/17
3. ऋ0 10/97/20
4. ऋ0 1/34/6
5. ऋ0 8/57/2
6. ऋ0 1/112–119
7. ऋ010 /97/04

8. ऋ0 10/97/6

9. ऋ0 10/97/15

10. अथर्ववेद 2/3/10

11. अथर्ववेद 3/31/10

12. अथर्ववेद 6/96/1

13. अथर्ववेद 8/7/1

14. अत्रिदेव, सुश्रुतसंहिता, मोतीलाल/बनारसीदास, 1975 पृ07

15. वही

16. चरक संहिता– अत्रिदेव, चरक संहिता, भार्गव पुस्तकालय गयाघाट, बनारस, पृ0–25

17. निरूक्त 1. 27

18. शत0ब्रा0–2.2.4.5

19. ऐतरेय ब्राह्मण 2.4.5, 23.7.23